E-ISSN: 3048-6041 | Volume- 2, Issue- 1 | January 2025

मनोवैज्ञानिक उपचार पद्धति में आथर्वण चिकित्सा का वैज्ञानिक अनुप्रयोग

(The Scientific Application of Atharvan Medication in Psychological Treatment Method)

Bhaskar Mishra[1], Acharya Pandit Sumit Mishra[2], Acharya Pooja Pandey[3], Diksha Pandey[4]
[1]Research Scholar (Sanskrit), University of Allahabad, Prayagraj
[2]Medical Assistant , Shri Siddh Atharvan Research Council (SSAARC), Kaushambi
[3]Medical Assistant , Shri Siddh Atharvan Research Council(SSAARC), Kaushambi
[4]Research Scholar (Sanskrit), University of Allahabad

शोधसार-

भारतीय ज्ञान परम्परा में मानव जीवन को पूर्णतः स्वस्थ रखने के लिए ऋषियों ने प्रकृति के सूक्ष्मतम स्वरूप का अवलोकन कर अग्नि, वायु, जल, मृदा, एवं ध्वनि द्वारा जो हमारे पञ्चतत्वों के भी प्रतीक है, एवं इनके द्वारा साध्य एवं असाध्य समस्त रोगों का प्राकृतिक रूप से समाधान बताया। ऋषिपरम्परा का समापन होने से आज हम असाध्य रोगों जिनमें शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार के रोग है का समाधान करने में असफल हो रहें हैं, यदि वैज्ञानिक पद्धति द्वारा प्रयोगात्मक वेद जिसे हम अथर्ववेद के नाम से जानते हैं, का विज्ञान की पद्धति एवं वेद की विचारधारा का संयुक्त प्रयोग किया जाये, तो निश्चित रूप से हम पूर्णतः स्वस्थ होंगे। इस वैदिक विज्ञान के अनुप्रयोग को दैवी चिकित्सा (आथर्वण चिकित्सा) के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है, क्योंकि आथर्वण का तात्पर्य अग्नि के उपासक ऋषियों से है। आथर्वण चिकित्सा तीन चिकित्सा(आसुरी चिकित्सा, मानुषी चिकित्सा एवं दैवी चिकित्सा) में सर्वोत्तम है, जिसके द्वारा कैंसर, पैरालिसिस, मधुमेह, गठिया, आदि शारीरिक एवं असामान्य व्यवहार आदि मानसिक रोगों का पूर्ण शमन किया जा सकता है।

प्रस्तावना (Introduction) _

‘‘यः कश्चिद् कस्यचिद् धर्मो मनुना परिकीर्तितः।

सः सर्वोऽभिहितो वेदे सर्वज्ञानमयो हि सः।।’’[1]

इस श्लोक की प्रतिपुष्टि भारतवर्ष के ही न हीं अपितु सम्पूर्ण विश्व अथवा ब्रह्मण्ड(Universe) के ज्ञान की उत्पत्ति (Origin of Knowledge) के रुप में समझनी चाहिये, क्योंकि ‘वेद’ अपने स्वरुप में उस समस्त विज्ञान **(‘विशिष्टं ज्ञानम् इति विज्ञानम्’ – आधुनिक Science जो *Scientia* से बना है, उसका तात्पर्य भी Special Knowledge है)** को समावेशित किया है, जिसकी प्राकट्यता **‘ऋषियों’** ने अपनी **‘ऋषिचर्यावृत्ति’** (जिसका आधुनिक समय में Research संज्ञा से तुलना की जा सकती है) से समाज को अनुसंधान कर प्रदान किया।

[1] मनुस्मृति 2.7

आधुनिक समय में आधुनिक विज्ञान (modern science) के प्रयोगात्मक पक्ष (Experimental View) के कारण वैदिक ज्ञानराशि को केवल रुढ़िवादी कहकर उसके महत्त्वपूर्ण पक्षों पर प्रकाश नहीं डाला जाता, जबकि आधुनिक विज्ञान भी उसी वेदराशि का ही एक अंश है।

आधुनिक विज्ञान पदार्थवादी (Materialism) है, जिसके अन्तर्गत पदार्थमात्र का चिन्तन किया जाता है, और इस आधार पर विश्व के विज्ञान को जानना असम्भव हो जाता है, जबकि वेद पदार्थवाद की पराकाष्ठा **अध्यात्मवाद (Spiritualism)** से अपने चिन्तन को प्रकट करता है, जिसका अनुसंधान ऋषियों ने नाप के फलस्वरुप किया-

"सदानादानुसन्धानात् संक्षीणा वासना भवेत्"[2]

इस नाद के अनुसन्धान में ऋषियों ने प्रकृति के सूक्ष्मतम कणों से लकेर ब्रह्मण्ड के पिण्डों तक का दर्शन किया, जिसके लिये उन्हे श्रोतृदिव्यता की प्राप्ति करना पड़ा, और यह श्रोतृदिव्यता श्रोत्र और आकाश के सम्बन्ध में एकाग्रता से उत्पन्न हुआ।–

" श्रोत्राकाशयोः सम्बन्ध संयमाद् दिव्य श्रोत्रम्"[3]

ऋषियों ने विश्व को जो विज्ञान दिया, वह वेद के रुप में प्रख्यात हुआ, और इस ज्ञानराशि के अन्तर्गत मानवकल्याणार्थ समग्र चिन्तन आता है। वेदों के नामकरण और उनमें विषयवस्तु का विभाजन भी विशेष दृष्टि के अर्न्तगत आता है, जिसको कालान्तर में पाश्चात्य विचारों ने भारतीय संस्कृति को नष्ट करने में उलझा दिया, किन्तु यह विषयेतर तथ्य है, इसकी चर्चा अन्यत्र होगी।

ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद में सन्दर्भ श्रृंखलान्तर्गत यहाँ पर अथर्ववेद प्रमुख है, और ध्यातव्य है कि आधुनिक विज्ञान(Modern science) के सम्पूर्ण घटक अथर्ववेद में घटित भी होते है, उदाहरण के लिये आधुनिक विज्ञान में पदार्थ (Matter) और ऊर्जा (Energy) का उल्लेख अथर्ववेद में इस प्रकार मिलता है –

यस्माद्दचो अपातक्षन् यजुर्यस्माद्पाकषन्।

सामानि यस्य लोमान्यथर्वाङ्गिरसो मुखं स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः

असच्छाश्वां प्रतिष्ठन्तीं परममिव जना विदुः।

उतो सन्मन्यन्तेवरे ये ते शाखामुपासते[4]

[2] अथर्ववेदीय तन्त्र विज्ञान-पण्डित देवदत्त शास्त्री, पृष्ठ संख्या-10

[3] योगदर्शन, विभूतिपाद, पृष्ठ संख्या-86

[4] अथर्ववेद 10.7.20-21

इसी आधार पर अध्ययन से ज्ञात होता है, कि अथर्ववेद में पदार्थविज्ञान (Material Science), मनोविज्ञान (Psychology), अक्षरविज्ञान (Orthography), कर्मजव्याधिविज्ञान (Pathology), चिकित्साविज्ञान (Medical Science) के विषय और उनके प्रयोग आधियो, व्याधियों को दूर करने के लिये विशद रुप से लिखित हैं।

वैदिक काल में अग्नि के उपासक ऋषियों को आथर्वण कहा जाता था। आथर्वण ऋषिगण का वेद अथर्ववेद था, जो उनके स्वाध्याय, चिन्तन, मनन और अध्यात्मसाधना का मूल आधार था। अथर्ववेद में 'ब्रह्मौदन', 'देवानां पूरयोध्या' (मानव शरीर) आदि अनेक ब्रह्मज्ञान, अध्यात्मज्ञान सम्बन्धी महत्वपूर्ण उपदेश दिये गये है। इन उपदेशों के स्वाध्याय, चिन्तन द्वारा अथवा आथर्वण तन्त्र विधान द्वारा मनुष्य मानसिक स्थिरता, स्थिरप्रज्ञता और आत्मदर्शन की उपलब्धि प्राप्त कर सकता है। अथर्ववेद का 'अथर्व' नाम सार्थक है, प्रयोज्य है। शब्द व्युत्पत्ति के आधार पर 'अथर्वा' शब्द का अर्थ 'अचञ्चलता की स्थिति' है –

'थर्व इति गतिर्नाम, नथर्व इति अथर्वा'

शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक आदि सभी प्रकार की चञ्चलता को अथर्ववेद की मन्त्रसाधना द्वारा **स्थिरधीः, स्थितप्रज्ञ** बनाया जा सकता है।

प्राचीन ईरान के पारसी भी **'अग्नि-पूजक'** थे, उनके धर्म-ग्रन्थ **'अवेस्ता'** में भी अग्नि के उपासक पुरोहित को अथ्रवन कहा गया है।

वैदिक वाङ्मय में अथर्ववेद के 'ब्रहवेद', 'भैषज्यवेद' आदि अनेक नामों में एक नाम 'अथर्वाङ्गिरस्' भी है। **'अथर्वा'** और अङ्गिरस् ये दो भिन्न ऋषि थे, इन्होनें ही सर्वप्रथम अग्नि को प्रकट किया। अग्नि की उपासना यज्ञ द्वारा की थी, अथर्ववेद में अथर्वा- ऋषि द्वारा दृष्ट ऋचायें अध्यात्मपरक, सुखकारक, अभ्युदय प्रदान करनेवाली और श्रेय-प्रेय देनेवाली है, तथा अङ्गिरस द्वारा दृष्ट ऋचायें अभिचारकर्मपरक निर्ऋति, आधि व्याधि आदि दोष समाप्त करने वाली है।

अर्थात् अथर्वा ऋषि के चिकित्सा-विधान का प्रयोग शारीरिक बीमारी न होकर मानसिक बीमारी (Mental Disease) हेतु है, जबकि आङ्गिरस ऋषि का चिकित्सा प्रयोग शारीरिक बीमारी (Physical Disease) और मानसिक बीमारी दोनो हेतु हैं।

अङ्गिरस का शब्दपरक, व्युत्पत्तिपरक अर्थ 'अंगो में प्रवाहित होने वाला रस' है। मानव शरीर के प्रत्येक अवयव और अङ्ग में **'सञ्जीवन रस'** प्रवाहित हुआ करता है। अङ्गागों में प्रवाहमान् यह रस मानव शरीर के प्रत्येक अवयव को सक्षम और सशक्त बनाया करता है, जिसे आधुनिक विज्ञान **'लसिका'**(Lymph) या **'ऊतक द्रव'** (Tissue Fluit) कहता है। इस रस के सूखने पर या अवरुद्ध होने पर अथवा इसका अभाव होने पर इन्द्रिया (Organ) शिथिल होकर अपना कार्य व्यापार करने में असमर्थ हो जाती है, जब मनुष्य के शरीर की यह स्थिति होती है, तब उसे **लकवा (Paralysis), कालिज(Palsy), मधुमेह** (Diabetes) आदि रोग हुआ करते है।

इसी प्रकार प्रवाहमान रस में यदि विकार उत्पन्न हो जाये तब मानसिक बीमारी क्षुब्धता (Disturbance), असंगत भय (Phobia), मनोग्रस्तता-बाह्यता विकृति (Obessivve Cumplseve Disorder), लैंगिक दुष्क्रिया (Sexual Disfunction) आते है।

अथर्ववेद का आधुनिक विज्ञान सम्मत जो प्रयोग पण्डित देवदत्तशास्त्री[5] जी ने भारतवर्ष सहित अन्यान्य 35 देशों में किया उस **आथर्वण चिकित्सा** के अनुप्रयोग का संक्षिप्त निदर्शन इस शोध-पत्र में निर्दिष्ट होगा।

चिकित्सा – परिचय – (Introduction of Medicine)-

भारतीय वैदिक चिकित्सा पद्धति ने आयुर्वेद के अन्तर्गत तीन प्रकार की चिकित्सा पद्धति को स्वीकार किया है, जिसमें आधुनिक वैज्ञानिक चिकित्सा प्रणाली के साथ ही वैदिक चिकित्सा पद्धति एवं सामान्य जनमानस के मध्य प्रचलित चिकित्सा पद्धतियाँ भी है। यह तीन प्रकार की है-

1). आसुरी चिकित्सा – इसके अन्तर्गत शल्यक्रिया चीर-फाड़, आपरेशन आदि होता है।

2). मानुषी चिकित्सा – इसके अन्तर्गत काष्ठादि औषधियों द्वारा चिकित्सा की जाती है।

3). दैवी चिकित्सा- इसके अनुसार आसन, प्राणायाम, जप, हवन, अनुष्ठान एवं मनोवैज्ञानिक विधियाँ आती है।[6]

उपर्युक्त चिकित्सात्रय में उत्तरोत्तर चिकित्साविधि की श्रेष्ठता समझनी चाहिऐ, क्योंकि आसुरी चिकित्सा द्वारा शारीरिक कष्ट पूर्णतः समाप्त नहीं होते, अतः यह अधम चिकित्सा है।

मानुषी चिकित्सा द्वारा काष्ठ- औषधियों के सेवन से शरीरस्थ रसों की जीर्णता दूर होती है, उनमें नवशक्ति का संचार होता है, अतः उत्तम चिकित्सा है।

दैवी चिकित्सा सर्वोत्तम है, जिसके अन्तर्गत **''आथर्वण चिकित्सा''** आती है, क्योंकि यह जितना शारीरिक स्वस्थ करती है, उससे कहीं अधिक मानसिक रुप से व्यक्ति को स्वस्थ करती है। मानसिक विकार यथा क्रोध, ग्लानि, चिन्ता और भय आदि से शरीर में चालीस प्रकार के विष- उत्पन्न होते है, उन विषों को दूर करके शरीर की नसों, नाड़ियों को विशुद्ध और निर्विष बना देती है, इसीलिये इसे प्राणविद्या कहा जाता है।

अथर्ववेद में दैवी चिकित्सा का सर्जक/प्रेरक दैवभिषक्[7] अर्थात् देवताओं के वैद्य (चिकित्सा) अश्विन् कुमारों को कहा गया है-

अमुत्रभूयादधि यद् यमस्य बृहस्पतिरभिशस्तेरमुञ्चः।

[5] देवभाषा के देवदत्त एक वैदिक वैज्ञानिक- भास्कर मिश्र, पृ० सं०-236

[6] अथर्ववेदीय तन्त्र विज्ञान-पण्डित देवदत्त शास्त्री पृष्ठ संख्या-59

[7] अथर्ववेद 7/53/1

प्रत्यौहतामश्विना मृत्युमस्मद् देवानामग्ने भिषजा शचीभिः।।

सं क्रामतं मा जहीतं शरीरं प्राणापानौ ते सयुजाविह स्ताम्।

शतं जीव शरदो वर्धमानोऽग्निष्टे गोपा अधिपा वसिष्ठः।।[8]

दैवी चिकित्सा को सुस्पष्ट समझने के लिये पुराणों में एक कथा है – 'च्यवन' ऋषि की.....[9]

यह प्रतीक कथा है, जिसमें अश्विन् द्वय शरीर के अन्दर रहने वाले प्राण है, इन प्राण में जो शक्ति रहती है, वह अवस्थानुसार घटती-बढ़ती रहती है, इसकी क्षीणता का प्रभाव धातु,रस,स्यायु, मज्जा मेदा सभी पर पड़ता है, और क्षयशील होने की स्थिति का नाम च्यवन है। व्याधि – जरा, मृत्यु च्यवन के विभिन्न रुप हैं। शरीर के अन्दर रेतस है, वीर्य है, उसका नाम सोमास है। मनुष्य के शरीर के अन्दर सुषुम्णा जाल या मेरुदण्ड रुप वानरुपव्ययूप है, जो उसी में भरा रहता है। इन्ही के व्यय या अवव्यय पर शारीरिक ऊर्जा (PHYSICAL ENERGY) अस्थिर होती है, जिसको संयमित कर मनुष्य नवचेतना प्राप्त कर सकता है।

अतः दैवीय चिकित्सा का प्रयोग करते हुये आथर्वण चिकित्सा में पञ्च अनुप्रयोग है-

1. **संकल्प या आवेश अनुप्रयोग**
2. **अभिमर्षण एवं मार्जन अनुप्रयोग**
3. **आदेश अनुप्रयोग**
4. **मणिबन्धन अनुप्रयोग**
5. **कृत्याभिचार \यातुकर्म अनुप्रयोग**[10]

यहाँ ध्यातव्य है, आधुनिक वैज्ञानिक मतानुसार असामान्य मनोविज्ञान (Abnormal Psychology) के प्रमुख पक्षों जिनमें –

1).प्राचीनकाल में प्रेत विद्या(Demonology among the Ancient)

2).मध्यकालीन प्रेत विद्या (Demonology in middle Age)

3).आंगिक या कायजन्य विचारधारा(Organic or somrtogenic veiwpoint)

4). सामाजिक सांस्कृतिक दृष्टिकोश(Social culture viewpoint)[11]

---

[8] अथर्ववेद 7/53/2

[9] The Rigveda: the Earliest Religious poetry of india. Jamison, Stephanie W,Brereton, Joel P, 1948, New York, 2014, P-968

[10] तन्त्र सिद्धान्त एवं साधना, पण्डित देवदत्त शास्त्री, पृष्ठ संख्या-13

[11] आधुनिक असामान्य मनोविज्ञान-डा० डी.एन. श्रीवास्तव, पृष्ठ संख्या-21

आथर्वण चिकित्सा के वैदिक के साथ ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण के समन्वित करतें है, इस

आधार पर आथर्वण चिकित्सा के निम्न-सोपान होतें है-

1). आश्वासन चिकित्सा

2). उपचार चिकित्सा

3). सूर्यकिरण चिकित्सा

4). जल-चिकित्सा

5). अग्नि,वायु तथा हवन चिकित्सा

6). शल्य चिकित्सा

7). विष –चिकित्सा

8). केश रोग चिकित्सा

9). शिरोरोग चिकित्सा

10). मानसिक रोग चिकित्सा

11). भूतोन्माद रोग चिकित्सा

12). अपस्मार चिकित्सा

13). नेत्र-रोग चिकित्सा

14). कास रोग चिकित्सा

15). अपची चिकित्सा

यह समस्त चिकित्सा प्रकार आथर्वण और मनोवैज्ञानिक पद्धति से समन्वित होगें, जिनका विभिन्न विधियों से मानसिक एवं कुछ शारीरिक व्याधियों के निवारण हेतु अनुप्रयोग किया जायेगा।

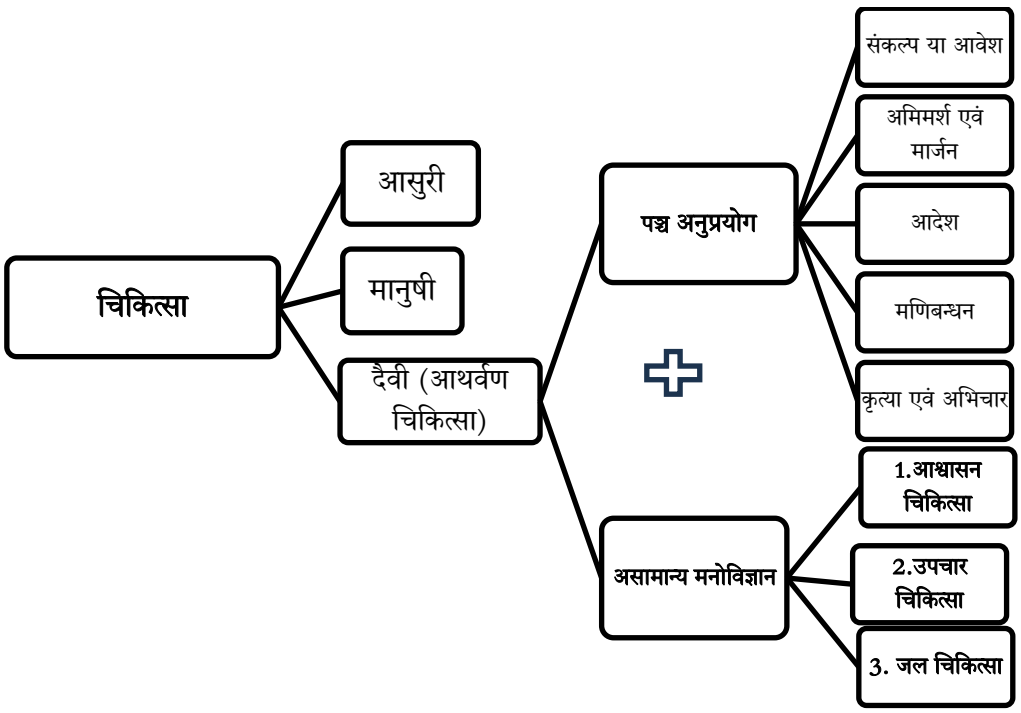

चिकित्सा आवश्यकता (The Need of Medicine)—

वर्तमान समय विश्व-विज्ञान में मन्त्र, और तन्त्र के स्थान पर यन्त्र प्रधान हो गया है, जिससे सम्पूर्ण विश्व में विकास के साथ ही विनाश की एक ऐसी श्रृंखला का आविर्भाव होता जा रहा है, जिसे आण्विक समस्या(Molecular Problems) मनस्ताप और मनोविक्षिप्तता (Anxiety Neuroses), असंगत भय(Phobia), मनोविदलता(Schirophrenia), व्यामोही विकृति(Delusional Disorder), चारित्रिक विकृतियाँ(Character Disorder), कामुक विचलन या विकृतियाँ (Sexual Deuitation or Disorder), बाल अपराध(Juvenile Delinquency), मद्यपान(Alcoholism), औषधि-व्यसन(Drug Abuse), मानसिक मन्दन (Mental Retordation), आत्महत्या(Sucide), स्वलीनता (Autism) आदि इस प्रकार रोग परिलक्षित हो रहे हैं, जिसका निदान, जल्दी कोई चिकित्सक अथवा मनोचिकित्सक नहीं कर पाते, क्योंकि मानव शरीर की निर्धारक शक्ति प्राण है। यह प्राणशक्ति नाड़ी-जाल से सम्पूर्ण शरीर में प्रवाहित हुआ करती है, जहाँ कहीं शरीर के किसी अंग में प्राणशक्ति का प्रवाह अवरुद्ध हो जाता है, वहीं रोग उत्पन्न हुआ करता है। कभी कोई व्यक्ति देखने में भला चंगा है, किन्तु वह किसी ऐसे रोग से आक्रान्त रहता है, कि खिन्न, भयभीत, शंकालु अस्थिर या निष्क्रिय बना रहता है, जो शरीर-विज्ञान और मनोविज्ञान की चिकित्सा से दूर रहता है, परन्तु इस प्रकार के समस्त रोगों का निदान अथर्ववेदीय विज्ञान के द्वारा हो जाया करता है, क्योंकि आथर्वण चिकित्सा द्वारा प्राणविधा द्वारा प्राणशक्ति का संचार कहाँ अवरुद्ध हो रहा है? यह रोगी के शिर पर हाथ रखकर, अथवा रोगी का हाथ पकड़कर अन्तःप्रेरणा शक्ति द्वारा सुगमता से – लिया जाता है।

आथर्वण चिकित्सा पूर्व में मन्त्र आदि प्रयोग करने की परोक्ष प्रक्रिया और मन्त्र शक्ति को आधुनिक-विज्ञान स्वीकार नहीं करता। परन्तु आथर्वण चिकित्सा का वैज्ञानिक अनुप्रयोग यह एक सशक्त अन्तःप्रक्रिया है, सभी अवस्थाओं में वेद मन्त्रों के शब्दों में एक विशिष्ट शक्ति निहित रहती है, प्रयोजक जब किसी पर इन मन्त्रों द्वारा कोई प्रयोग करता है, तब सके संकल्प के साथ मन्त्र की शक्ति उसी प्रकार प्रज्वलित होती है, जिस प्रकार जैसे ईधन के सहारे आग जलती है, और प्रयोजक का संकल्प मन्त्र शक्ति में समाहित होकर, साकार होकर प्रत्यक्ष खड़ा हो जाता है।

अतः इस समय दैवी चिकित्सा की महत्तपूर्ण आवश्यकता है।

चिकित्सा-उद्देश्य- आयुर्वेद के अनुसार –

''प्रयोजनं चास्य स्वस्थस्य स्वास्थ्यरक्षणमातुरस्य विकारप्रशमनं च'' ।[12]

अर्थात् स्वस्थ मनुष्य के स्वास्थ्य की रक्षा और रोगी के रोगमुक्ति का संकेत यही इस चिकित्सा का भी उद्देश्य है। इस चिकित्सा उद्देश्य के अन्तर्गत **दैवी चिकित्सा (Divine Medication)** अथवा दैवव्याश्रय चिकित्सा (Divine Thearapy) पर कार्य किये जायेंगे। इस चिकित्सा का विवेचन आयुर्वेद आदि ग्रन्थों पर भी द्रष्टव्य है, किन्तु

[12] चरकसूत्र 15/44

औपचारिक रुप से अर्वाचीन समय में इसका प्रयोग अद्रष्ट हो गया है, किन्तु इसका प्रयोग प्राचीन समय में होता रहा है, जिसका प्रमाण चरकसंहिता के सूत्रस्थानम् में दीर्घञ्जीवतीयाध्याय में प्राप्त होता है-

''हेतुलिङ्गौषधज्ञानं स्वस्थातुरपरायणम्।

त्रिसूत्रं शाश्वतं पुण्यं बुबुधे यं पितामहः।''[13]

अर्थात् आयुर्वेद में त्रिसूत्र के आद्यगुरु ब्रह्म जी है, जिन्होने दक्षप्रजापति, अश्विनीकुमार, इन्द्र, भरद्वाज, आत्रेय पुनर्वसु, अग्निवेश, भेल, जतूकर्ण, पराशर, हारीत और फिर क्षारीत ने प्राप्त किया। यह त्रिसूत्र के विषय इस प्रकार समझना चाहिये-

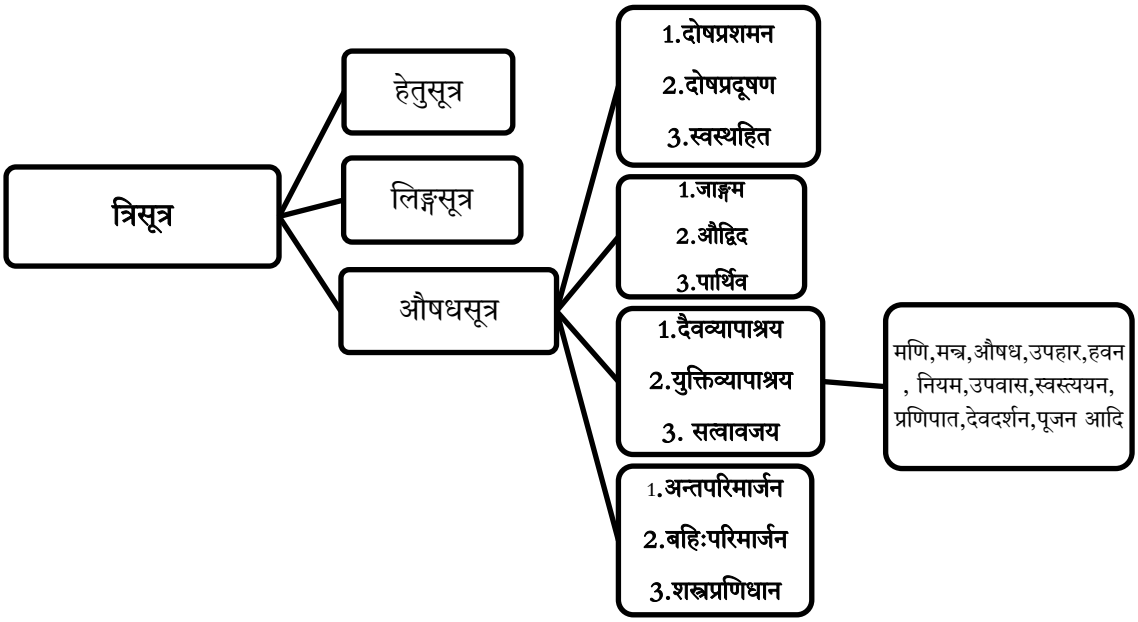

अतः इस प्रकार दैवी चिकित्सा भारतीय ज्ञान परम्परा का वह महत्वपूर्ण सोपान है, जिसका आथर्वण चिकित्सा के रुप में आधुनिक विज्ञान के अनुसार प्रयोग करके प्रमुखतम मानसिक और कुछ शारीरिक बीमारियों का उपचार किया जा सकता है।

हमारे चिकित्सासूत्र का मूल उद्देश्य होगा-

''प्रशाम्यत्यौषधेः पूर्वो दैवयुक्तिव्यपाश्रयैः।

[13] पृष्ठ सं० 5 चरकसंहिता प्रो. रविदत्त त्रिपाठी

मानसो ज्ञानविज्ञानधैर्यस्मृतिसमाधिभिः ।''[14]

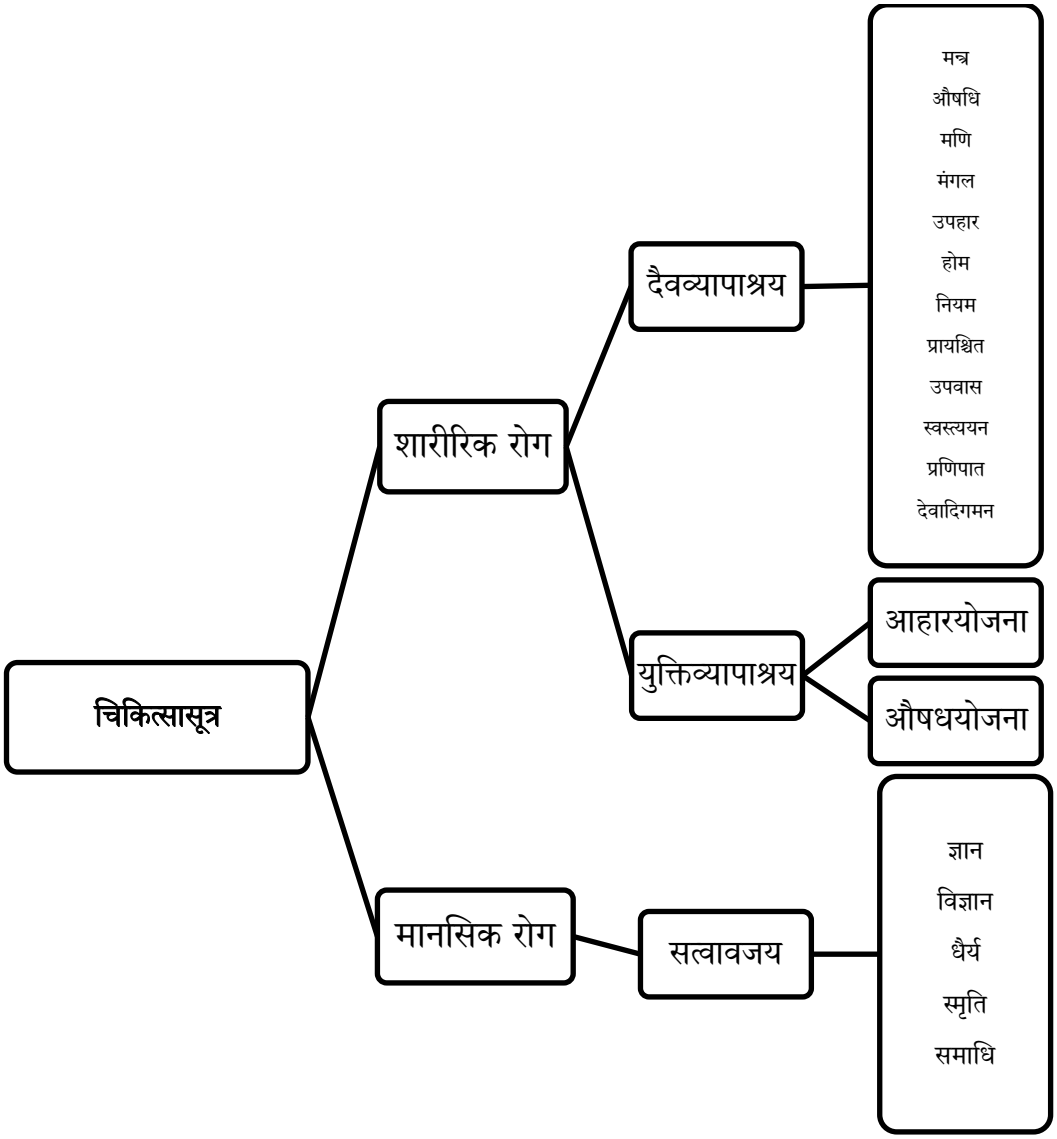

चक्रपाणि टीका में भी कहा गया है- 'सम्प्रति दोषप्रशमकारणमाह प्रशाम्यतीत्यादि। पूर्व इतिशारीरः दोषग्रहणेन तज्जन्या व्याधयोऽपि गृह्यन्ते विकृददोषादन्यत्वाद्व्याधीनाम्। दैवमद्वष्टं तदाश्रित्य यद् व्याधिप्रतीकारं करोति तद्दैवव्याश्रयम्। युक्तिर्योजना शरीरभेषजयोर्हितो यो योगस्तदपेक्षं संशोधनसंशमनादि युक्तिव्यपाश्रयमुच्यते। [15]

अन्यत्र- दैव्यव्याश्रययम् मन्त्रोषधिमणिमङ्गलवल्युपहारहोमनियम प्रायश्चित्तीय वासस्वस्त्यन प्रणिपात गमनादिः।

[14] पृष्ठ सं० 34 चरकसंहिता प्रो. रविदत्त त्रिपाठी

[15] (च०स० 1/58)

साथ ही चिकित्सा उद्देश्य की श्रृंखला में आधुनिक मनोविज्ञान के अनुसार अशान्य व्यवहार के अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्व स्वास्थ्य संगठन(WHO) के सहयोग से American psychiatric Association 1980 के द्वारा The Diagnostic & Statistical Manual of Mental Disorders (DSM 111) का जो वर्गीकरण हुआ, उसमें 17 प्रकार के जो मानसिक रोग का उल्लेख है, उन सभी का पूर्णतः निदान आथर्वण चिकित्सा के द्वारा होगा, जो भारतीय ज्ञान परम्परा का सर्वाधिक व्यवहारात्मक वक्ष होगा। यह 17 मानसिक रोग निम्न है-

01 Organic Mental Disorder
02 Substance use Disorder
03 Schizophrenic Disorder
04 Paranoid Disorder
05 Schizoaffective Disorder
06 Affective Disorder
07 Psychoses Not Elsewehere Classified
08 Anxiety Disorder
09 Factitious Disorder
10 Somato Form Disorder
11 Disociative Disorder
12 Personality Disorder
13 Psycho Sexual Disorder
14 Disorder usually arising in childhood or Adolescence
15 Reactive Disorder not classified elswhere
16 Disorders of Impulsive control not elsewhere
17 Other Disorder

पूर्वोक्त सभी प्रकार की समस्याओं का जो निदान किया जायेगा, उसमें प्रयुक्त आथर्वण चिकित्सा के अन्तर्गत सम्पूर्ण प्रयोगों का आधार विश्वविख्यात आथर्वण चिकित्सक पण्डित देवदत्त शास्त्री जी के कचित और लिखित सिद्धान्तों पर आधारित होगा जिनमें –

1- संकल्प या आवेश
2- अभिमर्श और मार्जन
3- आदेश
4- मणिबन्धन
5- कृत्या और अभिचार

पर आधारित होगा, जिसमें आथर्वण जल चिकित्सा, सूर्यकिरण चिकित्सा, आश्वासन चिकित्सा, उपचार चिकित्सा, अग्निवायु तथा हवन चिकित्सा आदि प्रमुख पक्ष होंगे। पण्डित देवदत्त शास्त्री जी ने आथर्वण प्रयोग किया, और वह सभी सफल रहे, अतः यह हमारे मार्ग को सफल करने का प्रशस्त पाथेय होगा।

चिकित्सा की शास्त्रीयता और वैज्ञानिकता –

भारतीय ऋषियों ने नाद के अनुसन्धान द्वारा जिन रहस्यों को समझा, वह सम्पूर्ण विज्ञान उन्होंन शास्त्र के रुप में सम्प्रेषित किया। कालान्तर में वह शास्त्र मनुष्य नें प्रमादस्वरुप अध्ययन न्यूनतम कर दिया, एतदर्थ ससे निहित कल्याणकारी भावनाओं का प्रसारण भी अल्प हुआ, और मनुष्य की बुद्धि पदार्थवादी होकर आध्यात्मिक चिन्तन से पृथक हुई, जिससे वर्तमान समस्याओं का आविर्भाव हुआ।

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को द्विविध चक्र से समझना चाहिये, जिसमें प्राचीन से अर्वाचीन ज्ञान परम्परा का संवहन हुआ-

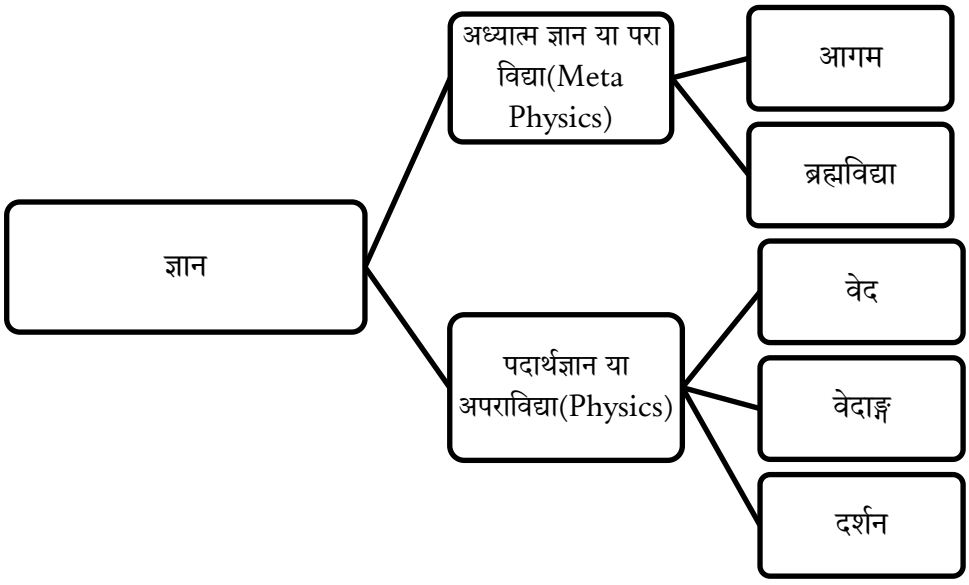

पण्डित देवदत्त शास्त्री जी के अनुसार –

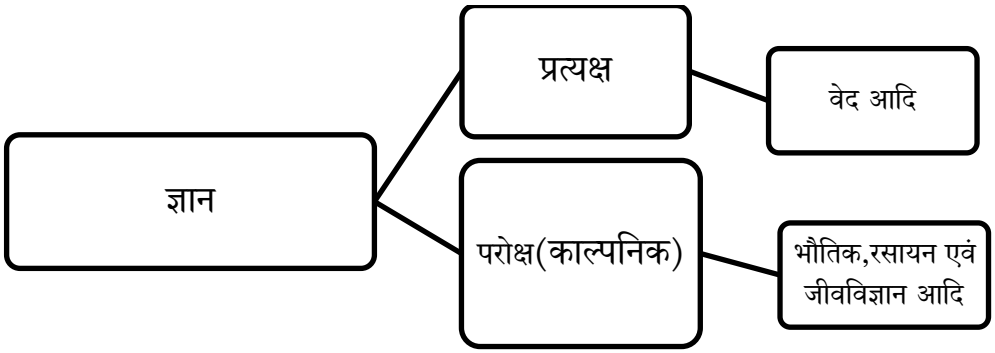

यहाँ जो जिस ज्ञान का उल्लेख हुआ, वह एक दिग्दर्शन है, जो पहले विज्ञानवादी नही मानते थे, किन्तु आइस्न्टीन, बेल्जियम के ओवेलन आदि ने इसको समझकर यह स्वीकार किया, **''अवष्टभ्य पद्भ्यां शिवं भैरवञ्च''** इस कथन को इस प्रकार बताया है-

आद्या शक्ति = Energy Quanta

आदि अवस्था महाप्रलय = Maximum Entropy

आदि अवस्था की दो प्रधान शक्तियाँ –

1) सदाशिव = Gramitation or power of configuration
2) महाकाल = Electromagnetism

आथर्वण – चिकित्सा एक ओर अथवर्वेद से अभिप्रेरित है, जहाँ मनुष्य का शरीर मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार तथा पाँच कर्मेन्द्रियों और पाँच ज्ञानेन्द्रियों से निर्मित है। साथ ही अथर्ववेद का उपदेश है कि शारीरिक, और मानसिक क्लिष्ट न होकर शरीर को अमीव (व्याधियों) को दिव्य भावनाओं, दिव्य कर्मो से नीरोग बनाओ-

मा त्वा प्रापच्छपथो माभिचार: स्वे क्षेत्रे अनमीवा विराज।[16]

मनुष्य की शरीर मात्र रासायनिक पदार्थो (Chemical substance) से नहीं है, अपितु उसमें विद्युत प्रवाह (Electric Current) की स्वगलित व्यवस्था है, इसी आधार पर इसकी कार्यपद्धति गतिशील रहती है।

जिस प्रकार यन्त्र(Machine) तेल, भाप आदि से ऊर्जा लेते है, उसी प्रकार शरीर के लिये सृष्टा ने उपयुक्त आहार की ऊर्जा प्रदान की है।

शरीर एक पावर हाउस है, मस्तिष्क उसका केन्द्र है। शरीर के मेरुदण्ड से होते हुये अगणित विद्युत तार शरीर के समस्त अवयवों में कलापूर्ण ढंग से गुँथे हुये है, इन तारों को ज्ञानतन्तु कहा जाता है। शरीर को आंशिक ऊर्जा आहार से जबकि विशिष्ट ऊर्जा 'प्राणविद्युत' से प्राप्त होती है।

यथा विद्युत दो ध्रुवो (+) और (-) से उत्पन्न होती है। वैसे ही शरीर की विद्युत व्यवस्था में मूलाधार चक्र को (-) और सहस्रार चक्र को (+) माना जाता है। फिलीपींस आदि देशों में इस प्राणशक्ति से न केवल मानसिक अपितु शारीरिक असाध्य मृगी- मूर्च्छा, कैंसर आदि रोगों का निदान भी किया जाता है।

चिकित्सा विधि – (Medication Method) –

[16] (अथर्ववेद 11\1\22)

पण्डित देवदत्त शास्त्री जी के आथर्वण चिकित्सा एवं आधुनिक अमान्य मनोविज्ञान के अध्ययन की विधियों को समन्वित कर **'आथर्वण चिकित्सा का वैदिक वैज्ञानिक अनुप्रयोग'** प्रस्तुत किया जायेगा, जिसमें अथर्ववेद के –

1) आश्वासन चिकित्सा विधि
2) उपचार चिकित्सा विधि
3) जल चिकित्सा विधि
4) सूर्यकिरण चिकित्सा विधि
5) हवन चिकित्सा विधि

एवं मनोविज्ञान के ---

1) सम्मोहन विधि(Hypnosis Method)
2) मनोविश्लेषण विधि(Psychoanalytic Method)
3) वैयक्तिक अध्ययन या जीवन इतिहास विधि (Case study or history Method)
4) निरीक्षण विधि(Observation Method)
5) साक्षात्कार विधि(Interview Method)
6) श्रेणीमूल्यांकन विधि(Rating scale Method)
7) प्रयोगात्मक विधि (Experimental Method)

पक्ष को समन्वित कर आथर्वण पञ्च चिकित्सा का निम्नलिखित प्रकार से अभिधान किया जायेगा—

1) **संकल्प या आवेश चिकित्सा अथवा प्राणविनिमय चिकित्सा** (Mesmerism Medication)

अथर्ववेद से लेकर आधुनिक विज्ञान तक में यह सिद्ध हो चुका है, कि मनुष्य के शरीर से विद्युत-तरंग निकलती है, जब मनुष्य अपनी विद्युत्तरंगों को षड् अवस्था तन्द्रा, निन्द्रा, प्रगाढ़ सुपुष्टि, अनुवृत्ति, दिव्यदृष्टि एवं प्रत्यग्दृष्टि अथवा अन्तर्दृष्टि द्वारा संयमित कर अपने शारीरिक आवेश को सङ्कल्प क्रिया द्वारा साधकर असामान्यता के लक्षण (symptoms of Abnormility) जैसे- बालअपराध(Juvenile Delinquency), स्वलीनता (Autism), चारित्रिक विकृति(character Disorder) आदि प्रकार के रोगियों पर अपने सङ्कल्प को उनके रोग के प्रकार को समझकर दृष्टि, वाणी आदि द्वारा उनके मानसिक तंरगों को स्वस्थ करना होता है।

उदा०- प्राचीन समय में मन्त्र चिकित्सा, शाबरमन्त्रचिकित्सा आदि का यह प्रयोग झाड़-फूँक आदि के रुप में द्रष्टव्य होता था। आधुनिक समय में संगीत आदि सुनकर मनुष्य मस्तिष्क में संचेतना लाते है, यहाँ तक की यूरोप आदि में संगीत के द्वारा गाय आदि से अधिक दूध की व्यवस्था है। आज भी मोटिवेशनल स्पीकर, कवि, अध्यापक विचारक आदि की भावनायें इसी रुप में मस्तिष्क को उत्प्रेरित करती है।

आधुनिक समय में बच्चों से लेकर वृद्धों तक यह समस्या आ गयी है, कि वह स्वलीनता में इतना अधिक फँसते जा रहे हैं कि सामाजिकृत भावनायें समाप्त हो रही है, अतः यह चिकित्सा सुपात्र व्यक्ति सयमित होकर इस प्रकार की चिकित्सा का अधिकारी हो सकता है।

अथर्ववेद का मन्त्र –

"परोऽपेहि मनस्पाप किमशस्तानि शंससि।

परेहि न त्वा कामये वृक्षां वनानि सं चर गृहेषु गोधु मे मनः।"[17]

को संकल्पित कर मनोचिकित्सा विधि द्वारा अपनी वाणी और वेधक दृष्टि से रोगी को आश्वासन देना, जिसमें

1). लक्षणों से छुटकारा पाना(To Relive of Symptoms)

2). प्रसन्न रहने की क्षमता बढ़ाना (To Increase Ability to be happy)

3). समायोजन में सहायता (Aid in adjustment)

4). स्वाभाविकता को बढ़ाना(To increase spontaneity)

5). कार्यक्षमता को बढ़ाना (To increase efficiency)

6). आत्मसम्मान और सुरक्षा की भावना को बढ़ाना (To increase Felling of self esteem and security)

7). अन्तर्दृष्टि में वृद्धि करना (To increase insight)

आदि इसके सोपान हैं। इस विधि का प्रयोग एकल या सामूहिक रुप से किया जा सकता है।

विशेष – आधुनिक समय में बच्चो को मोबाइल की लत लगना, बच्चों की मस्तिष्क क्षमता का हास होना, दाम्पत्य जीवन में कलह हो, जीवन की सही दिशा को न पाकर मद्यपान (Alcholism) आत्महत्या (Sucide) असामाजीकृत आक्रामक प्रतिक्रियायें (Unsocialised aggressive reaction) , नोमोफोबिया आदि के लिये यह चिकित्सा सर्वोपरि सिद्ध होगी।

2) अभिमर्षण या मार्जन चिकित्सा (Aurora Medication)—

योगशास्त्र, स्वरशास्त्र और तन्त्रशास्त्र में प्राणविनिमय का जो वैज्ञानिक विवेचन मिलता है, इससे यह सिद्ध है कि मनुष्य के शरीर से विघुत्प्रवाह निकला करता है। हर मनुष्य की विद्युत्शक्ति दूसरे मनुष्य या दूसरे प्राणी से भिन्न हुआ करती है। मनुष्य के शरीर से निकलने वाला विद्युत्प्रवाह हर समय बहनेवाला एक प्रकार का पदार्थ है, और

[17] अथर्ववेद 6/45/1

यह शक्ति एक प्राणी के शरीर से निकलकर दूसरे प्राणी के शरीर में प्रविष्ट हो जाती है। इसी सिद्धान्त के आधार पर आथर्वण चिकित्सा में हस्ताभिमर्श, मार्जन किया जाता है। रोगी के शरीर में दोनों हाँथो की अँगुलियों ऊपर से नीचे फेंकते हुये यह मन्त्र पढ़ा जाता है-

''अयं मे हस्तो भगवानयं मे भगवत्तरः।

अयं मे विश्वभेषजोऽयं शिवाभिमर्शनः।।

हस्ताभ्यां दशशाखाभ्यां जिहावाचापुरोगवी।

अनाममित्नुभ्यां हस्ताभ्यां ताभ्यां त्वाभिमृशामसि।।''[18]

दोनों हाँथो की दशो अँगुलियों से रोगी के शरीर के सर्वांगो का स्पर्श करते हुये प्रयोक्ता जब मन्त्र पढ़ता है, तो रोगी के अन्दर प्रयोक्ता द्वारा प्रक्षेपित विद्युत, तरंग उसके अंग अंग को स्पन्दित कर, शरीर को रोमान्जित और स्वस्थ एवं प्रसन्न करती है, प्रयोक्ता को ध्वनि, तरंग, संकल्पनिष्ठ और शक्ति प्रयोग का यथेष्ट ज्ञान पर यह क्रिया सघ, फलवती होती है, जिससे साध्य और असाध्य हर प्रकार के रोग दूर हो सकते हैं।

हार्टअटैक, हाईब्लडप्रेशर, वज्राघात यह क्रिया तत्काल प्रभाव डालती है। यद्यपि मार्जन के विविध प्रयोग मन्त्र अलग-अलग होते हैं, किन्तु यहाँ पर संक्षेपण में उनकी विधि और कुछ मन्त्र का संकेत दिया जा रहा है-

प्रयोग – विधि- तदन्तर प्रयोगकर्ता को हाँथ की उँगलियों से विद्युतप्रवाह द्वारा रक्तसंचरण के आरोहण और अवरोहण का अभ्यास करना चाहिये, उसके लिये मार्जन-विधि की प्रक्रिया को पूर्णतः समझना चाहिये, पुनः विद्युतप्रवाह के द्वारा मानसिक रोगी को इच्छाशक्ति के अनुसार यथोचित् कृत्रिम निद्रा में ले जाकर विभिन्न आथर्वण मन्त्रों क्रियायोग विनियोग अथवा यथोचित औषधि से हस्ताभिमर्श करना चाहिये।

इस प्रक्रिया को करते समय स्थान एकान्त चाहिये, और जिस प्रकार आधुनिक नक्षत्रशाला का ध्वनि और वातावरण कृत्रिम रुप से निर्मित किया जाना चाहिये, जिससे उत्पन्न हो रहे कम्पन्न से जो तरंगे निकलें, उनसे मानसिक सुस्थिरता हो।

इस मार्जन विधि के दो स्वरूप होते है-

1.- दीर्घ मार्जन – जो सम्पूर्ण शरीर अर्थात् सिर से लेकर पैर तक किये जाते है।

2.- लघु मार्जन – जिब किसी अंग विशेष पर किया जाता है, मार्जन विधि का अनुप्रयोग संज्ञानात्मक लक्षण(Cognitiv symptoms) , भावात्मक लक्षण(Affective symptoms), क्रियात्मक लक्षण(Conative symptoms) वाले मानसिक रोग एवं गठिया, साइटिका जैसे असाध्य शारीरिक रोगों के हेतु भी किया जाता है।

[18] ऋग्वेद 10.60.12

3. आदेशक्रिया या सम्मोहन विधि – (Hypnotism Method)-

इस सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण आथर्वण चिकित्सा का ज्ञान मिश्र के लोगो को था, आधुनिक समय में 19वीं शताब्दी में – ने इसका प्रयोग किया, बाद में वर्नहीम, लीबाल्ट , ल्यूता आदि ने भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया, किन्तु विश्व में आथर्वण मन्त्रों के प्रयोग के बिना यह प्रक्रिया पूर्ण नहीं हो सकती है, इसलिये यह विधि 12.5% तक ही सफल हो पायी। यह आदेश मन्त्रों की भावना द्वारा रोग, दोष एवं मानसिक विकार तथा असाध्य हिसीरिया आदि जैसे रोगो के लिये भी महत्त्वपूर्ण चिकित्सा है।

किसी भी प्रकार के मानसिक रोग आदि के लिये रोगी को एकान्त स्थान में यथासुविधानुसार सम्मोहन निद्रा में लिटाकर भिन्न-भिन्न आथर्वण मन्त्रो या गायत्री मन्त्र अथवा (ॐ) का उचारण करते हुये रोगी को इस प्रकार कहें –

‘‘मैं तुम्हारे रोग दोष अथवा बुरी आदतें तुम्हारे अन्दर से निकालता हूँ, तुम इस निकृष्ट प्रकृति को छोड़ दो, सदा सर्वदा के लिये परित्याग, मैने तुम्हारे अन्दर से इसको निकाल दिया।

इस प्रकार के वाक्य पूर्ण आत्मविश्वास दृढ़संकल्प द्वारा पन्द्रह मिनट तक दुहराना चाहिये।

इन वाक्यों का प्रयोग अवस्थानुसार करना चाहिये, यह एक विधा है, जिसके अनेकानेक मन्त्र अथर्ववेद में है, और हिस्टीरिया, जीर्ण, एकान्तरा ज्वर, तिजारी, चौनिया, टाइफाइड, महाज्वर, कालज्वर, राजयक्ष्मा, स्नायुदौर्बल्प, इस्नोफीलिया, लकवा, हृदयरोग आदि में आदेश मन्त्रों का प्रयोग किया जाता है।

4). मणिचिकित्सा (Gems Medication)

यह आथर्वण चिकित्सा जल चिकित्सा और हवन चिकित्सा पर आधारित है, जिसमें विभिन्न मणियों को धारण अथवा उनमें जलावसेचन कर मस्तिष्क और अदृष्ट रोगों का शमन किया जाता है।

अथर्ववेद के विभिन्न मन्त्रों द्वारा शंखमणि, दर्भमणि, वरणमणि, औदुम्बरमणि आदि का प्रयोग मिलता है, जिनमें कुछ मणियाँ वानस्पतिक, कुछ समुद्रादि से प्राप्त, कुछ पर्वतीय प्रदेशों से प्राप्त और कुछ रत्न सदृश होती है। यथा वरणमणि कश्मीर के टिक्कड़ गाँव, फालमणि कर्नाटक में साथ अन्यान्य मणि मुम्बई, राजस्थान आदि से प्राप्त की जाती है।

5). कृत्यादूषण और अभिचार कर्म –

अथर्ववेद में 32 मन्त्र इस प्रकार के है, जो अदृश्य कीटाणुओं, विषाणुओं आदि के द्वारा किसी प्रकार की उत्पन्न बीमारियों को दूर करने के लिये किये जाते हैं।

प्राचीन समय में नजर लगना, यातुकर्म आदि की मनोदशा को इस प्रकार के मन्त्रों से दूर किया जाता है। जो बाद में शाबर मन्त्र, और ग्रामीण संस्कृति के विभिन्न माध्यमों से दूर किये जाने लगे।

पूर्वोक्त पञ्चचिकित्सा में तीन चिकित्सा एक दूसरे की पूरक है, और उत्तरवर्ती – चिकित्सा एक दूसरे की।

इसमें सभी चिकित्सा में सर्वप्रथम रोगी को आहार-विहार शुद्ध कराकर हवन चिकित्सा करके तभी उसकी कोई आथर्वण चिकित्सा करनी चाहिये। रोगी को स्वस्थ होने में एक दिन से तीन महीने का समय लग सकता है, इसलिये उसको संयमित और नियमन करना आवश्यक है।

चिकित्सा कर्ता के गुण – इस चिकित्सा को पूर्म करने के लिये निम्न गुण होने चाहिये-

1. आत्मविश्वास
2. दृढ़ संकल्प
3. परमार्थबुद्धि
4. बेधकदृष्टि
5. स्वस्थशरीर
6. धैर्य और साहस
7. शुद्ध सात्विक आहार और विहार
8. शान्त – चित्तता।

ध्यातव्य होना चाहिये, कि मनुष्य इस चिकित्सा अभिकर्म में प्रवृत्ति होने के लिये इस सूत्र को ठीक से समझना चाहिये –

''तपःस्वाध्याय ईश्वरप्रणिधानिक्रियायोगः''[19]

उपसंहार (Conclusion) - यह आथर्वण चिकित्सा पूर्वोक्त निरुपण के आधार पर जिस दैवीय चिकित्सा का प्रतिपादन करता है। आधुनिक युग में जब विज्ञान अपनी पराकाष्ठा से विकास के साथ ही विनाश के मानदण्डों को भी उपस्थापन कर रहा है, ऐसी स्थिति में वेदों के मूल प्रायोगिक गुणधर्म को आधुनिक विज्ञान के स्वरूप में व्यवहार करना आवश्यक हो जाता है। आज जब सूक्ष्म जीवाणु, विषाणु के आधार पर परमाणु एवं अणु से युक्त अदृश्य युद्ध एवं आपदा का आविर्भाव हो रहा है, तो दैवीय चिकित्सा की मानव कल्याण के लिए महती उपयोगिता एवं एक मात्र विकल्प ही अवलोकित होता है। हमारे ऋषियों ने भविष्य के संकट को आभास करके ही विज्ञान के विनाशकारी स्वरुप का प्रयोग नही किया था। ऋषियों ने यज्ञ विज्ञान एवं सामान्य व्यवहार में जितने भी नियमों का प्रतिपादन किया था वह मानव कल्याण के लिए ही थे। अतः हमें उन्ही नियमों को मूल आधार मानकर आज वैदिक वैज्ञानिक चिकित्सा प्रणाली का अनुप्रयोग करना चाहिए। पण्डित देवदत्त शास्त्री जी ने इस चिकित्सा का पूर्ण विवरण अपने तन्त्र सिद्धान्त एवं साधना, तन्त्र साधना सार[20] एवं त्रिपुरसुंदरी साधना[21] में किया है।

[19] क्रिया योग साधना पण्डित देवदत्त शास्त्री पृष्ठ संख्या-6

[20] तन्त्र साधना सार -पण्डित देवदत्त शास्त्री पृष्ठ 138 से 166 तक

[21] त्रिपुरसुंदरी साधना-पण्डित देवदत्त शास्त्री पृष्ठ संख्या-39 से 48 तक।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मनुस्मृति सम्पादक-आचार्य श्री शंकर दयाल त्रिपाठी, दुर्गा पुस्तक भण्डार, इलाहाबाद, सन् 2015, पृष्ठ संख्या-28
2. अथर्ववेदीय तन्त्र विज्ञान, पण्डित देवदत्त शास्त्री, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2013, ISBN : 81-901887-7-7-1, पृष्ठ संख्या-10
3. महर्षि पतंजलिकृत योगदर्शन, स्वामी अड़गड़ानंद, श्री परमहंस स्वामी अड़गड़ानंद ट्रस्ट अंधेरी, मुम्बई, 2009, पृ0सं0-86
4. अथर्ववेद संहिता, प्रकाशक-चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान जवाहर नगर दिल्ली, पुनर्मुद्रित संस्करण-2022, पृष्ठ संख्या-235
5. देवभाषा के देवदत्त: एक वैदिक वैज्ञानिक- भास्कर मिश्र, अमृतब्रह्म प्रकाशन, दारागंज प्रयागराज, प्रथम संस्करण-2023, ISBN-978-81-965116-7-8, पृष्ठ संख्या-236
6. अथर्ववेदीय तन्त्र विज्ञान, पण्डित देवदत्त शास्त्री, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2013, ISBN : 81-901887-7-7-1, पृष्ठ संख्या-59
7. अथर्ववेद संहिता, प्रकाशक-चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान जवाहर नगर दिल्ली, पुनर्मुद्रित संस्करण-2022, पृष्ठ संख्या-160
8. अथर्ववेद संहिता, प्रकाशक-चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान जवाहर नगर दिल्ली, पुनर्मुद्रित संस्करण-2022, पृष्ठ संख्या-160
9. The Rigveda: the Earliest Religious poetry of india. Jamison, Stephanie W,Brereton, Joel P, 1948, New York, 2014, P-968
10. तन्त्र सिद्धान्त और साधना, पण्डित देवदत्त शास्त्री, स्मृति प्रकाशन 124 शहराराबाग, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण -1976, पृष्ठ संख्या -13
11. आधुनिक असामान्य मनोविज्ञान, डॉ0 डी0 एन0 श्रीवास्तव, साहित्य प्रकाशन,आगरा, पृष्ठ संख्या-21
12. चरकसंहिता, व्याख्याकार -प्रो0 रविदत्त त्रिपाठी, प्रकाशक-चौखम्भा संस्कृत भवन वाराणसी, 2018, पृष्ठ संख्या-06
13. चरकसंहिता, व्याख्याकार -प्रो0 रविदत्त त्रिपाठी, प्रकाशक-चौखम्भा संस्कृत भवन वाराणसी, 2018, पृष्ठ संख्या-05
14. चरकसंहिता, व्याख्याकार -प्रो0 रविदत्त त्रिपाठी, प्रकाशक-चौखम्भा संस्कृत भवन वाराणसी, 2018, पृष्ठ संख्या-34
15. चरकसंहिता, व्याख्याकार -प्रो0 रविदत्त त्रिपाठी, प्रकाशक-चौखम्भा संस्कृत भवन वाराणसी, 2018, पृष्ठ संख्या-72

16. अथर्ववेद संहिता, प्रकाशक-चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान जवाहर नगर दिल्ली, पुनर्मुद्रित संस्करण-2022, पृष्ठ संख्या-246
17. अथर्ववेद संहिता, प्रकाशक-चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान जवाहर नगर दिल्ली, पुनर्मुद्रित संस्करण-2022, पृष्ठ संख्या-121
18. ऋग्वेद-संहिता(मूलमात्रम्)-चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, जवाहर नगर, दिल्ली, पुनर्मुद्रित संस्करण-2022, पृष्ठ संख्या-320
19. क्रिया योग साधना, पण्डित देवदत्त शास्त्री, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी,2013,ISBN-978-9382415-01-5, पृष्ठ संख्या-6
20. तन्त्र साधना सार, पण्डित देवदत्त शास्त्री, श्री गणेश प्रकाशन मन्दिर,124 शहराराबाग प्रयागराज,1997, पृष्ठ संख्या-138 से 166 तक।
21. त्रिपुरसुंदरी साधना- पण्डित देवदत्त शास्त्री, शुभम प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण-सन् 2011, ISBN:81-901887-3-9, पृष्ठ संख्या-39 से 48 तक ।